



KRIYA YOGA
HIMALAYAN RETREAT

KAUSANI, 22nd to 27th OCTOBER 2026

de-conditioning the human mind

Ujjwal Lahiri

क्रियायोग

हिमालयन रिट्रीट, कौसानी

22 से 27 अक्टूबर, 2026

अनुबंधनों से मानव मन की मुक्ति

उज्ज्वल लाहिड़ी

INDEX

No.		Message	Page No.
1.	34	Tradition is not Truth	 1
2.	147	What is a Blessing?	 5
3.	276	Human Conditionings - The First One	 9
4.	277	Human Conditionings - The Second One	 11
5.	278	Human Conditionings - The Third One	 14
6.	279	Human Conditionings - The Fourth One	 16
7.	280	Human Conditionings - The Fifth One	 18
8.	281	Human Conditionings - The Sixth One	 20
9.	284	Human Conditionings - The Seventh One	 22
10.	287	Human Conditionings - The Eighth One	 24
11.	288	Human Conditionings - The Ninth One	 26
12.	289	Human Conditionings - The Tenth One	 28
13.		Retreat Program Schedule	 32

विषय सूची

क्र.सं.		सन्देश		पृष्ठ
1.	34	परम्परा सत्य नहीं है	....	3
2.	147	आशीर्वाद	....	7
3.	276	मानसिक अनुबन्धन; प्रथम	....	10
4.	277	मानसिक अनुबन्धन; द्वितीय	....	12
5.	278	मानसिक अनुबन्धन; तृतीय	....	15
6.	279	मानसिक अनुबन्धन; चतुर्थ	....	17
7.	280	मानसिक अनुबन्धन; पंचम	....	19
8.	281	मानसिक अनुबन्धन; षष्ठ	....	21
9.	284	मानसिक अनुबन्धन; सप्तम	....	23
10.	287	मानसिक अनुबन्धन; अष्टम	....	25
11.	288	मानसिक अनुबन्धन; नवम	....	27
12.	289	मानसिक अनुबन्धन; दसम	....	30

Sofia, Bulgaria,
April 4, 2001

Message 34

TRADITION IS NOT TRUTH

All methods and paths of various religions, sects and cults are constructed within the scope of mind and would therefore lead to unreality. All paths enmesh you within intellect and experience – the limited; whereas intelligence and existence is unlimited. There is no path to reality, truth or what you may call God.

Buddhism can not be the path to enlightenment, for Buddhism was formulated much after the enlightenment of Buddha. Buddha was not Buddhist. Christianity and its innumerable sects came after the Christ dissolved into the Divine and thus these can not lead to the Divine. Jesus was not Christian.

Vaishnavism can not lead you to Krishna through emotional indulgence and easy sentimentality. All this surfaced much after Krishna vanished into eternity.

Islamic fundamentalism and violence can not get yourself to God, for all this emerged after Muhammad was mysteriously made available to Godhood.

Kriya Yoga is not a method to become liberated! It is the ending of all conforming and becoming. The simple practices (tapah) are meant for consolidating the glimpses of understanding occurring as a consequence of swadhyay (reflections on the ways of our mental activities), by releasing the stranglehold of the network of thought on our natural state. This is a state of energy and existence and not of experience and ego-centric activities.

Traditions are imitated. That is why it is easy to be a Hindu, Muslim, Christian, Buddhist and so on; but difficult to be truly religious -- a Kriya Yogi. Kriya Yoga is freedom from tradition without being anti-traditional. In this freedom, the conditioned reflexes from the cultural and traditional inputs of one's consciousness tend to disappear. Kriya Yoga is the opening of our ultimate potential and an exposure to the energy of supreme understanding. Thoughts may buzz around. In Kriya Yoga, there is no entity to host them! Then even the walls of our meditation room are as beautiful as a rose garden or a mountain outside.

Thought is society, tradition, isms, organised religions. But the gap between thoughts is God! In this gap emerges a Buddha, Jesus, Krishna, Muhammad and in the continuity functions Buddhism, Christianity, Hinduism and Islam. The moment a thought is expressed, the schizophrenia begins! The moment we say "this is beautiful", we have already brought ugliness somewhere! Hate therefore follows our so-called love. The moment one says "you are my friend", he has already sown enmity somewhere! The mind dwells in duality, in opposites. Beauty, love, friendship, sanity are not of the mind!

Silence is true prayer. Otherwise our prayer is our advice to God about how things should happen! Who are we to advise God? During a true prayer, you do not utter a word. Rather the Word comes to you. Then truth is not the logic of words. It is in the illogicalness of the wonder of creation. Undefine yourself to be ultimately sane. Kriya Yoga is stepping out of the world of time and mind and beginning to live in the state of timelessness and eternity. Freedom in Kriya Yoga is beyond bondage, not against bondage. Kriya Yoga does not turn human beings out of the world, but enables them to live better in it and energises their endeavour to mend it. Kriya Yoga is a song in silence, a dance in the stillness of the body, a joy in the breath. And one's heartbeat is then the beat of the universe itself! When one speaks in a state of 'no-mind', perhaps his body is being used by the universe to speak! These are then not the words of a particular religion but perhaps of the Universal Truth.

Om Truth Om

सोफिया (बुल्गारिया)
अप्रैल 04, 2001

सन्देश संख्या 34

परम्परा सत्य नहीं है

विभिन्न धर्मो, सम्प्रदायों और पंथों की समस्त पद्धतियाँ एवं पथ मन के अन्दर निर्मित होते हैं और इसीलिए अयथार्थ की ओर ले जाते हैं। सभी पंथ आपको बुद्धि और अनुभव के अन्दर उलझा देते हैं। बुद्धि और अनुभव सीमित हैं, जबकि चैतन्य और अस्तित्व असीमित हैं। वास्तव में यथार्थ, सत्य अथवा जिन्हें आप ईश्वर कह सकते हैं, की ओर ले जाने वाला कोई पथ है ही नहीं।

बौद्ध धर्म ज्ञानोदय का मार्ग नहीं हो सकता क्योंकि यह तो महात्मा बुद्ध को ज्ञान प्राप्त होने के बहुत बाद प्रतिपादित हुआ है। बुद्ध स्वयं बौद्ध धर्मावलम्बी नहीं थे। ईसाई धर्म और इसके असंख्य पंथ ईसा मसीह के दिव्य सत्ता में लय हो जाने के पश्चात् ही आये और इसलिए ये उस दिव्य यीशु की ओर नहीं ले जा सकते हैं। यीशु भी ईसाई धर्मावलम्बी नहीं थे।

वैष्णववाद अपने भावनात्मक आसक्ति तथा कोमल भावुकता के माध्यम से आपको कृष्ण (पूर्ण चैतन्य) की ओर नहीं ले जा सकता है। यह सब तो कृष्ण के शाश्वतत्व में विलीन हो जाने के बहुत बाद सतह पर आया।

इस्लामी कट्टरता एवम् उग्रता भी आपको ईश्वर (पूर्ण चैतन्य) की ओर नहीं ले जा सकती है। यह सब मुहम्मद साहब के रहस्यमय ढंग से पूर्ण चैतन्य से संयुक्त होने के पश्चात् ही उभर कर सामने आया।

क्रियायोग मोक्ष प्राप्त करने की पद्धति नहीं है। यह समस्त वादों द्वारा निर्धारित पद्धतियों के अंधानुपालन और अपने बनावटीपन का अन्त है। क्रियायोग की सरल क्रियाओं (तप) का अभ्यास करने से शरीर की सहजावस्था पर मन एवं विचारों की गलाघोंटू पकड़ से मुक्ति हो जाती है और तब स्वाध्याय (मन की गतिविधियों पर मनन) के परिणामस्वरूप घटित होनेवाली समझदारी की झलक घनीभूत होती है। यह ऊर्जा और अस्तित्व की अवस्था है, न कि अनुभव और अहंकेन्द्रित गतिविधियों की।

परम्परायें तो नकल होती हैं। यही कारण है कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध आदि होना आसान है किन्तु एक सच्चा धार्मिक – क्रियायोगी, होना कठिन है। क्रियायोग बिना परम्परा विरोधी हुए परम्परा से मुक्ति है। इस मुक्ति के कारण संस्कृति एवं परम्परा के योगदान से उत्पन्न चित्तवृत्ति की अनुबन्धित प्रतिक्रियायें धीरे–धीरे समाप्त होने लगती हैं। क्रियायोग हमारी श्रेष्ठ संभावना का उद्घाटन एवं सर्वोच्च समझदारी की ऊर्जा का प्रकटीकरण है। विचार तो चारों ओर गूँजते ही रहेंगे, परन्तु क्रियायोग के द्वारा उन विचारों को प्रश्रय देनेवाली आधार–इकाई विलुप्त हो जाती है फलस्वरूप उनका मायावी खेल समाप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में हमारे ध्यानकक्ष की दीवारें भी उतनी ही सुन्दर हो जाती हैं जितनी कि गुलाब वाटिका अथवा बाहर की पर्वत–श्रृंखला।

विचार से ही समाज, परम्परा, वाद, संगठित धर्म आदि की उत्पत्ति होती है। परन्तु दो विचारों के मध्य जो अन्तराल यानी कि शून्यता है वही पूर्ण चैतन्य है। विचारों के इसी अन्तराल में बुद्ध, ईसा मसीह, कृष्ण, मुहम्मद आदि का आविर्भाव होता है और विचारों की निरन्तरता में बौद्ध, ईसाइयत, हिन्दुत्व एवम् इस्लाम क्रियाशील रहते हैं। जिस

क्षण किसी विचार को अभिव्यक्त किया जाता है, उसी क्षण खण्डित मानसिकता की शुरूआत होती है। जिस क्षण हम कहते हैं कि ''यह सुन्दर है'' उसी क्षण हम अन्यत्र कहीं की कुरूपता स्वीकार कर लेते हैं। इसलिए घृणा हमारे 'तथाकथित प्रेम' का अनुसरण करती है। जिस क्षण कोई यह कहता है कि ''तुम मेरे मित्र हो'' वह कहीं पर शत्रुता का बीज बो चुका होता है। मन द्वैत में परस्पर विरोधी–युग्मों में विचरण करता है। इसीलिए सौन्दर्य, प्रेम, मैत्री, प्रज्ञा आदि मन के परे हैं।

मौन सच्ची प्रार्थना है। शब्दों में की गई प्रार्थना हमें ईश्वर का सलाहकार बना देती है अर्थात् हम ईश्वर को सुझाव देने लगते हैं कि क्या होना चाहिए और क्या नहीं। ईश्वर को सलाह देने वाले हम होते कौन हैं? सच्ची प्रार्थना के समय आप अपनी ओर से कोई अन्य शब्द नहीं बोल पाते हैं बल्कि केवल प्रणव ही रह जाता है। तब सत्य शब्दों का तर्कजाल नहीं रह जाता है। यह तो सृष्टि की विस्मयकारी विसंगति है। पूर्ण रूप से समझदारी की ऊर्जा में होने के लिए अपने आपको अपरिभाषित करें। क्रियायोग काल और मन की सीमा से बाहर निकलकर कालातीत तथा शाश्वतता की अवस्था में रहने की शुरूआत है। क्रियायोग में जिस मुक्ति की बात की गई है, वह बन्धन के परे है न कि बन्धन के विरूद्ध। क्रियायोग मानव को वैराग्य के लिए प्रेरित नहीं करता है, बल्कि संसार में अनासक्त होकर बेहतर जीवन जीने के योग्य बनाता है और इसके लिए ऊर्जान्वित करता है। क्रियायोग मौन का संगीत, शरीर की निश्चलता में होने वाला एक नृत्य तथा श्वास का आनन्द है। ऐसी स्थिति में, अपने हृदय का स्पन्दन पूरे बह्माण्ड का स्पन्दन बन जाता है। 'निर्मनावस्था' की वाणी मात्र बोलने वाले की भाषा नहीं बल्कि उसके मुख से स्फुटित पूरे ब्रह्माण्ड की भाषा होती है। तब ये शब्द किसी धर्म विशेष के नहीं होते बल्कि सार्वभौम सत्य होते हैं।

ॐ सत्य ॐ

Paris,
May 29, 2008

Message 147

WHAT IS A BLESSING ?

A blessed devotee par excellence has kindly written this message for Kriyabans to ponder over. Devotion is Division-less-ness. Devotion is Divinity.

The most profound blessings have nothing to do with material needs. This disciple has known that a Sat Guru will NEVER let a disciple in surrender go astray. THIS is benediction.

This happened during a retreat in October 2005 at Ranikhet (Himalayas) while climbing to Babaji's cave. The climb is very steep in places and for bodies not used to mountains, it is arduous. There were more than a hundred disciples in the group and they had split into several small groups. There was a group with the Guru. This disciple took a route to climb that was a little easier on the body, while the Guru was climbing by a more difficult route. When the disciple reached the cave he got a message from another disciple that the Guru was asking for him and the disciple went down again. The Guru had not even reached half the way and he was resting with the disciples in his group. Panting with the exertion, the disciple went to the Guru and bowed at his feet. "Where were you?" asked the Guru, "why were you not with me?" The disciple said he had taken an easier route to climb. "See!" said the Guru, "There is no understanding here. When you are on a pilgrimage with the Guru, why do you seek a route that is easier than that taken by the Guru? The disciple has to be with the Guru whether the path is easy or difficult. If the Guru takes a difficult route and the disciple leaves him to take an easier one, where is the surrender? Why you do only that which is convenient? Why not do that which is correct?" The disciple walked behind the Guru the rest of the way up. Later when the visit was over a blast of understanding happened and the disciple wept uncontrolled as he realized that the Guru will NEVER allow this body to go astray. The tears were not from grief or joy, but just the body responding to the benediction. This is what a blessing is. Blessings happen. They are not sought or given.

There are people who seek the Guru's blessing for many things. Some want a job; some want money, some want a child (and some want twins) and so on. These are only applications wrongly addressed. Instead of applying to an organization for a job, the Guru is approached. These are all desires seeking fulfillment. Guru is not an Employment Exchange, nor an Agency for providing jobs! The Guru once said that like a forest that draws the rain clouds to it, blessings happen in spite of the Guru and in spite of the disciple.

From a Sat Guru's body blessings always flow but to receive it the body has to be in emptiness and surrender. Blessings are not fulfillment of desires. Perhaps the blessing may fulfill a need of the disciple in his worldly responsibilities, but that is not the motive of the blessing. Blessings have no motives. They are a benediction.

Surrender is always in emptiness. It is not TO any body or personality, but a choiceless state of let-go where one is in the flow of Life. Happening of Surrender is entirely by Grace. Tapah and Swadhyay consolidate this. Blessings flow.

Surrender cannot be taken for granted. There has to be the awareness that even surrender can be lost and the no-mind state could become all mind again. Surrender is by the blessing of the Guru Energy. And if Swadhyay is lost, this energy could also be lost. Swadhyay, Surrender, Emptiness, No-Mind, Blessing, Benediction, Wholeness – all are the same. And when there is this happening, then one is in Yoga.

Can a body be with the Guru just for being there – with no expectations, no seeking, no calculations, such as "I have served the Guru for so long so I must get so much blessing"? This is also happening. This body knows of a kriyaban who served the Guru but has lately been heard to say "What have I got after serving?"

Blessings are a wonder, a mystery, an enigma! They come to those, to whom they come!

Jai Blessings

पेरिस
मई 29, 2008

संदेश संख्या – 147

आशीर्वाद

आशीर्वाद को उपलब्ध एक उत्कृष्ट भक्त ने कृपा कर यह संदेश क्रियावानों के मनन हेतु लिखा है । विभाजनरहित होना भक्ति है और भक्ति ही भगवत्ता है।

गहन आशीर्वाद का भौतिक आवश्यकताओं से कोई संबंध नहीं होता । यह शिष्य जानता है कि सद्गुरु एक समर्पित शिष्य को कभी भी भटकने नहीं देंगे। यही कृपा है ।

अक्टूबर 2005 में रानीखेत (हिमालय) में हुए रिट्रीट के दौरान 'बाबाजी की गुफा' की चढ़ाई चढ़ते समय एक घटना घटी । रास्ते में कई स्थानों में चढ़ाई बहुत खड़ी एवं दुर्गम थी और पहाड़ों के अभ्यस्त नहीं रहने वाले शरीरों के लिए वह वस्तुतः कठिन थी । एक सौ से ज्यादा शिष्य थे और वे कई छोटे–छोटे समूहों में बँट गए थे । गुरूजी के साथ भी एक समूह था । इस शिष्य ने चढ़ाई के लिए एक ऐसा मार्ग चुना जो शरीर के लिए कुछ सुगम था जबकि गुरुजी अधिक कठिन मार्ग से चढ़ रहे थे । शिष्य जब गुफा तक पहुँच गया तो उसे दूसरे शिष्य से मालूम हुआ कि गुरूजी उसके बारे में पूछ रहे थे । उसी समय वह शिष्य पुनः नीचे उतरने लगा । तब तक गुरुजी आधा रास्ता भी तय नहीं कर पाये थे और अपने समूह के शिष्यों के साथ एक स्थान पर विश्राम कर रहे थे । थकावट से हाँफता हुआ शिष्य गुरुजी के पास जाकर उनके चरणों में प्रणाम किया । गुरुजी ने पूछा–तुम कहाँ थे? तुम मेरे साथ क्यों नहीं थे? शिष्य ने उत्तर दिया कि उसने चढ़ाई का सुगम मार्ग चुन लिया था । गुरुजी ने कहा, ''इसमें कोई समझदारी नहीं है । जब तुम गुरु के साथ तीर्थयात्रा पर हो तब गुरु के मार्ग की अपेक्षा तुम सुगम मार्ग क्यों चाहते हो ? मार्ग सुगम हो या दुर्गम, शिष्य को गुरु के साथ रहना है । जब गुरु दुर्गम मार्ग से जाते हैं और शिष्य सुगम मार्ग के लिए उन्हें छोड़ देता है, तो समर्पण कहाँ है? तुम वही क्यों करते हो जो सुविधाजनक है? वैसा क्यों नहीं करते जो सम्यक है ?'' यह शिष्य शेष चढ़ाई तक गुरुजी के पीछे–पीछे गया । बाद में जब गुफा दर्शन समाप्त हुआ, उस शिष्य की समझदारी में एक विस्फोट घटित हुआ और वह शिष्य अनियन्त्रित रूप से रोने लगा । वह समझ गया था कि उस शरीर को गुरुजी कभी भी भटकने नहीं देंगे। वे आँसू न दुःख के थे न खुशी के । वह शरीर आँसुओं के माध्यम से उस कृपादान का केवल उत्तर दे रहा था । यही कृपा है । कृपा स्वतः घटित होती है । यह माँगी और दी नहीं जाती ।

लोग गुरु का आशीर्वाद कई चीजों के लिए चाहते हैं । कुछ नौकरी चाहते हैं, कुछ धन चाहते हैं, कुछ बच्चा चाहते हैं, और कुछ जुड़वा बच्चे चाहते हैं आदि। ये सभी आवेदन वस्तुतः गलत पते पर दिए गए होते हैं । नौकरी के लिए किसी संस्था में आवेदन देने के बदले गुरु के पास जाया जाता है । ये सभी इच्छायें हैं जो पूर्ण होना चाहती हैं । गुरु कोई नियोजनालय नहीं है और न ही कोई नौकरी देनेवाला माध्यम । गुरु ने एक बार कहा था कि जिस तरह वन क्षेत्र में वर्षावाले बादल आकर्षित होकर स्वतः बरस जाते हैं उसी तरह कृपा स्वतः घटित हो जाती है, गुरु उपस्थित रहे या नहीं रहे, शिष्य उपस्थित रहे या नहीं रहे ।

एक सद्गुरु के शरीर से आशीर्वाद सर्वदा प्रवाहित होता रहता है लेकिन उसे प्राप्त करने के लिए शरीर को शून्यता और समर्पण की अवस्था में होना होगा। आशीर्वाद इच्छाओं का पूर्ण होना नहीं है । सम्भव है कि आशीर्वाद, शिष्य के सांसारिक–दायित्वों के निर्वहन में किसी आवश्यकता को पूरा कर दे परन्तु आशीर्वाद का वह प्रयोजन नहीं । आशीर्वाद निरुद्देश्य होता है और वही कृपा है ।

समर्पण सर्वदा शून्यता में होता है । यह कोई व्यक्ति विशेष या व्यक्तित्व के प्रति नहीं होता बल्कि यह तो जीवन के प्रवाह में प्रयत्न–शैथिल्य की चुनावरहित अवस्था है। समर्पण का घटित होना पूर्णतः कृपा है । तप और स्वाध्याय से यह घनीभूत होता है । आशीर्वाद प्रवाहित होता ही रहता है ।

समर्पण घटित होने पर भी इसे हमेशा के लिए स्वीकृत नहीं माना जा सकता । समर्पण भी खो सकता है और निर्मन की अवस्था फिर से चित्तवृत्ति के चंगुल में चली जा सकती है । अतः इसके प्रति सतत जागरुक रहना होगा । समर्पण गुरु–ऊर्जा की कृपा से ही होता है । जब स्वाध्याय नहीं होता तब यह ऊर्जा भी नहीं होती । स्वाध्याय, समर्पण, शून्यता, निर्मन, कृपा, आशीर्वाद, पूर्णता–सभी एक हैं और जब यह घटित होता है तभी व्यक्ति योग में होता है ।

क्या कोई शरीर गुरु के पास बिना किसी आशा, बिना किसी आकांक्षा या बिना किसी स्वार्थ के रह सकता है? ''मैंने गुरु की इतने समय तक सेवा की, अतः मुझे अवश्य ही आशीर्वाद मिलना चाहिए''–ऐसा भी कहा जाता है । यह शरीर एक क्रियावान को जानता है जिसने गुरु की सेवा की किन्तु उसे कुछ दिनों पहले यह कहते हुए सुना गया कि सेवा करने पर मुझे क्या मिला?

आशीर्वाद विस्मय है, रहस्य है, पहेली है । यह उन्हें ही मिलता है, जिन्हें यह मिलता है ।

।। जय आशीर्वाद ।।

Zvenigorod (near Moscow),
Russia, 16 June 2014

Message 276

Human Conditionings - The First One.

Let the Messages henceforth consider and ponder over various human conditionings one by one.

Let us, at the outset, see our conditioning of 'Problem solving'. Let us see it in the dimension of integrated outlook, that is, in the dimension of a division-free or holistic (wholeness) awareness. This implies seeing without spectatorship, that is, without 'I-ness'/self-centeredness. This also implies an ability to understand in our inner-being, without the usual fragmentation between the observer and the entity to be observed; so that there is the purity and wholeness in the process and wisdom of observation. This is to open the Door of the Omniscience & Omnipresence – an opposite-free Existential virtue and vitality which can not belong to the shoddy little and the vain separative psyche 'I' with all its accumulations of pressures and prejudices of the past and its assumptions of fancies and fantasies of the future. This 'I' is mind, mind is 'I'. And mind is the enemy of life (except in technical and practical matters). Mind is the terrorist to the truth of life and love which is Divinity -- nothing to do with our divisive consciousness!

We are conditioned to 'problem solving' right from our childhood. Our parents, our elders, our teachers in schools, Colleges, Universities, Institutes, Research Centers – in every walk of our technical centrifugal world, we are trained to solve problem after problem and this is so beneficial. This ensures progress, perfection, excellence, development in the technical affairs of the human kind.

Now, can this conditioning help us in solving the problems of our inner being, the psychological problems? In the outer, technical area, there is a dichotomy between the problem-solver and the problem, between the subject and the object. Thus, a problem can be tackled and solved either by oneself or through the guidance and help from an expert or a teacher.

But in centripetal affair, the problem-solver is the problem – the subject and object are the same! It is not that "I" has or has not a problem, "I" is the problem! The psychological problem and psyche 'I' are the same. There are no two! It is the problem that has projected the 'I' and this apparent division – which is false – has become the protective mechanism of the problem — everlastingly perpetuating and complicating the problem! And then and there come the gurus and other charlatans of the religious sects & cults and of the spiritual market of "meditation and yoga" as also the "psychological experts" doing analysis and thus bringing paralysis, because there is no dichotomy between the analysed (mind) and the analyser (also mind)!

Is a Total Awareness of the Whole situation possible? Is exploration into Insight – the Sustained Intelligence (Akhand Chaitanya) possible? Flower (not follow anybody) and find out!

Jai Flowering

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
16 जून 2014

सन्देश संख्या 276

मानसिक अनुबन्धन; प्रथम

यहाँ से आगे के सन्देशों में एक–एक कर विभिन्न मानसिक अनुबन्धनों पर स्वाध्याय किया जाय ।

प्रारम्भ में, 'समस्या–समाधान' के अनुबन्धन को लिया जाय । इस 'समस्या–समाधान' की प्रक्रिया को योग की दृष्टि से देखा जाय अर्थात् विभाजन मुक्त यानी कि पूर्ण सजगता के आयाम में देखा जाय । इसका अर्थ द्रष्टारहित दर्शन से है अर्थात् वैसा दर्शन जहाँ 'मैं–पना' नहीं है, जहाँ आत्मकेन्द्रित विचार नहीं है । इसका अर्थ हमारे अन्तर–अस्तित्व में समझदारी की उस क्षमता से भी है जिससे द्रष्टा और दृश्य में होने वाले सामान्य विभाजन से रहित दर्शन हो सके ताकि दर्शन की क्रिया एवं प्रज्ञा में पवित्रता तथा पूर्णता बनी रहे । और यही सर्वव्यापी एवं सर्वज्ञ भगवत्ता के उद्घाटन का द्वार भी है । यह भगवत्ता परस्पर विपरीतों से मुक्त अस्तित्वमय ऊर्जा है और यह कभी भूत के पूर्वाग्रहों एवं दवाबों तथा भविष्य की कल्पनाओं में रहनेवाले क्षुद्र और विभेदकारी चित्त ''मैं'' का नहीं हो सकता । यह ''मैं'' ही मन है और मन ही ''मैं'' है । तकनीकी एवं व्यावहारिक सन्दर्भों में मन उपयोगी है । किन्तु अर्न्तजगत में यह जीवन का शत्रु है । जीवन की सत्यता और प्रेम के लिए मन आतंकवादी की तरह है जबकि सत्य और प्रेम ही भगवत्ता है और उसका विभेदकारी मन से कुछ भी संबंध नहीं।

बचपन से ही 'समस्या–समाधान' हमारा अनुबन्धन हो जाता है। हमारे माता–पिता या अग्रज हों या विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, संस्थाओं या अनुसन्धान केन्द्रों के शिक्षक हों, उनके द्वारा हमें बर्हिजगत के प्रत्येक तकनीकी क्षेत्र में समस्याओं के समाधान हेतु प्रशिक्षित किया जाता है और यह अत्यन्त उपयोगी है । तकनीकी क्षेत्रों में मानव–जाति की प्रगति उत्कृष्टता और विकास इसी प्रशिक्षण से सम्भव होता है ।

अब देखना है कि क्या यह अनुबन्धन हमारे अन्तर्जगत की समस्याओं या मानसिक समस्याओं के समाधान में उपयोगी है? बहिर्जगत में अर्थात् तकनीकी सन्दर्भों में 'समस्या–समाधानकर्त्ता' और 'समस्या' के मध्य द्वैत होता है। उनमें एक कर्त्ता होता है और दूसरा 'वस्तु' होती है, जिस पर कार्य किया जाता है । इस तरह, समस्या को स्वयं सुलझाया जा सकता है या फिर किसी विशेषज्ञ या प्रशिक्षक की सहायता से उसका समाधान किया जा सकता है ।

किन्तु अन्तर्जगत के सन्दर्भ में, समस्या के समाधान का कर्त्ता और समस्या दोनों एक ही हैं । ''मैं'' समस्या से युक्त है या ''मैं'' समस्या से मुक्त है, ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि ''मैं'' ही समस्या है । चित्तवृत्ति की समस्या और चित्त अर्थात् ''मैं'', दोनों एक हैं । वे दो नहीं हैं । यह समस्या ही है जो ''मैं'' को प्रक्षेपित करती है किन्तु यह आभासी विभाजन, जो कि मिथ्या है, समस्या को बनाये रखने में सहायक होता है और इस तरह समस्या स्थायी और जटिल हो जाती है। ऐसे ही अवसर पर यहाँ तथाकथित गुरु, धार्मिक पंथों एवं सम्प्रदायों और 'ध्यान एवं योग'' की आध्यात्मिक दूकान चलाने वाले ठगों तथा तथाकथित मनोविशेषज्ञों का प्रवेश होता है जो मन का विश्लेषण करना सिखाते हैं । किन्तु उससे केवल विभ्रान्ति उत्पन्न होती है क्योंकि वहाँ विश्लेषक भी मन है और विश्लेष्य भी मन ही है । विश्लेषक और विश्लेष्य के मध्य द्वैत नहीं है ।

क्या इस सम्पूर्ण स्थिति के प्रति पूर्ण सजगता सम्भव है? क्या अखण्ड चैतन्य की अन्तर्दृष्टि की खोज सम्भव है? किसी का भी अनुकरण मत करो। स्वतन्त्र प्रस्फुटन को उपलब्ध होओ और जान जाओ।

।। प्रस्फुटन की जय ।।

Zvenigorod (near Moscow)
Russia, 17 June 2014

Message 277

Human Conditionings – The Second One.

Now, let us consider and ponder together over our conditioning regarding 'Time' and call it a 'second one'. Here also we shall have the Awareness total, and outlook of integration (Yoga) – not disintegrated fragmented mental undertakings which are called Viyoga.

We are heavily conditioned by time. In performing our daily tasks, we need time. In learning technical matters, we need time. In executing and organizing big technical programs, we need months and years of time. 'I' is a product of time. All the past taken together is 'I'. All the pursuits and projections for the future, taken as a whole, is also 'I'. 'I' is time. Time is 'I'. Again, there are no two! This 'I', as time, is so useful in the technical matters. 'I' is the coordinator of all technical knowledge that 'I' has acquired for its various needs in different situations. Thus, in the practical and technical world, 'I' as time functions elegantly and efficiently.

Now, does the 'I', as time, have any use in the inner-being? What are contents of the 'I-ness' that constitute the centripetal psychological consciousness? (We are not talking now about the above mentioned centrifugal technical aspects of consciousness). Let us see these contents together one by one as narrated below.

1. Craving for security, called as ambition (a good name for greed, acquisitions, accumulations and all the possessions& collections galore. All kinds of wanting, getting and grabbing).
2. Fear of insecurity and concomitant ache, agony, anxiety, apprehension & agitation. Fear of not getting what one is craving for. Fear of losing what one has.
3. Aggression, anger, animosity, antagonism, jealousy, frustration.
4. Guilt, gullibility, seeking gratification and glorification of various sorts.
5. Dependency on belief-systems for solace and assurance.
6. Carrying images of all sorts about oneself and others, thus getting into isolation by harboring all kinds of flattery & hurt and bringing about a mess in the area of relationship.

Is it possible to see and understand all the above mental pollutions instantaneously without the intervention of time, which means without the 'I-ness', because 'I' is time and 'I' is all this pollution too?

But cultural inputs and conditionings say that you should take your own time to see & comprehend all this pollution by going to this guru and reading that book, doing this or that to end all this; to get enlightened! Is it possible to see that time here is an impediment? Here, it has to be a jolt of lightning (joy of life's understanding) from the sky (ego-emptiness) on the forest (of mental fragmentations) in the inner-being to burn it all down.

Instant freedom from time, the 'I', is the greatest enlightenment! Taking time is the promotion of the ego-'I'.

Jai Instancy

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
17 जून 2014

सन्देश संख्या 277

मानसिक अनुबन्धन; द्वितीय

अब हमलोग दूसरे अनुबन्धन के रूप में समय सम्बन्धी अनुबन्धन के ऊपर साथ–साथ ध्यान करें। यहाँ भी हम पूर्ण सजगता तथा योग की समग्र दृष्टि को उपलब्ध हों, न कि वियोग रूपी विखण्डित मानसिक अवधारणाओं में फँस जायें।

हमलोग समय के अत्यधिक अनुबन्धन से ग्रस्त हैं। दैनिक कार्यों के सम्पादन में हमें समय की आवश्यकता होती है। तकनीकी बातों को सीखने में समय की आवश्यकता है। बड़े–बड़े तकनीकी कार्यक्रम बनाने एवं उनके आयोजन के लिए महीनों एवं वर्षों का समय लगता है। ''मैं'' समय का ही एक उत्पाद है। भूतकाल की समग्रता ''मैं'' है तथा भविष्य की कल्पनाओं एवं उन्हें पूरा करने के लिए की जाने वाली आपाधापी की समग्रता भी ''मैं'' है। ''मैं'' ही समय है और समय ही ''मैं'' है। पुनः, यहाँ द्वैत नहीं है। समय के रूप में यह ''मैं'' तकनीकी कार्यों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। विभिन्न परिस्थितियों की आवश्यकता के अनुरूप ''मैं'' जो भी तकनीकी जानकारी अर्जित करता है, वह उन समस्त जानकारियों का समन्वयकर्त्ता के रूप में उपयोग करता है। इस तरह तकनीकी एवं व्यावहारिक दुनिया में समय के रूप में ''मैं'' दक्षता एवं निपुणता के साथ काम कर सकता है।

अब देखें कि क्या समय के रूप में ''मैं'' की अन्तर–अस्तित्व में कोई भी उपयोगिता है? ''मैं–पना'' के उपादान क्या–क्या हैं? चित्तवृत्ति के मानसिक आयाम का निर्माण किन–किन अवयवों से होता है? (यहाँ हमलोग अभी चित्तवृत्ति के बहिर्मुखी एवं तकनीकी आयाम की चर्चा नहीं कर रहे हैं)। अब हमलोग नीचे वीर्णत अवयवों को एक–एक कर देखें।

1. सुरक्षा का लोभ जिसे महत्वाकांक्षा कहा जाता है। (यह लोभ, संग्रह, संचय एवं सभी प्रकार की चाहने–पाने की इच्छा आर सब कुछ हथियाने की इच्छा के लिए एक अच्छा नाम है)।

2. असुरक्षा का भय और उससे उत्पन्न पीड़ा, कष्ट, चिन्ता, आशंका, उत्तेजना। जो चाहते हैं, उसे नहीं पाने का भय। जो पास है, उसके खोने का भय।

3. क्रोध, द्वेष, शत्रुता, ईर्ष्या, निराशा।

4. अपराध बोध, कुंठा, विभिन्न प्रकार के तुष्टीकरण एवं महिमामण्डन की इच्छा।

5. सान्त्वना एवं आश्वासन के लिए विश्वास–पद्धतियों पर निर्भरता।

6. अपने एवं दूसरों के बारे में समस्त प्रकार की छवियों के साथ होना और इस तरह मन में सभी प्रकार की निन्दा एवं प्रशंसा रखने के कारण अकेलापन को उपलब्ध होना। इसी कारण आपसी सम्बन्धों में परेशानी होती है।

क्या उपर्युक्त सभी मानसिक प्रदूषणों को समय के हस्तक्षेप के बिना तत्क्षण देखना एवं समझना सम्भव है? ''मैं'' ही समस्त प्रकार का प्रदूषण भी है। अतः ''मैं–पना'' के बिना इन मानसिक प्रदूषणों को देखना–समझना सम्भव है क्या?

किन्तु सांस्कृतिक जानकारियाँ एवं अनुबन्धन यह बताते हैं कि तुम्हें इन प्रदूषणों को देखने एवं समझने के लिए किसी गुरु के पास जाना चाहिए या कोई पुस्तक पढ़नी चाहिए, या ऐसा या वैसा करना चहिए। और इस तरह इसके लिए तुम्हें समय लेना चाहिए ताकि इनसे मुक्त होकर प्रबोध को उपलब्ध हो सको। क्या यह देख पाना सम्भव है कि यहाँ समय बाधा है ? यहाँ, मानसिक–प्रदूषण रूपी जंगल के ऊपर अहं–शून्यता रूपी आकाश से जीवन की समझदारी की ऊर्जा रूपी विद्युत का झटका लगना आवश्यक है ताकि अन्तर–अस्तित्व के सभी प्रदूषण भस्मीभूत हो जायें।

समय अर्थात् ''मैं'' से तत्क्षण मुक्ति ही सबसे बड़ा प्रबोध है। समय लेना ''मैं'' को बढ़ावा देना है।

।। तत्क्षणता की जय ।।

Zvenigorod (near Moscow)
Russia, 18 June 2014

Message 278

Human Conditionings – The Third One.

Seeking security through habit formation, may be termed as our third conditioning. 'I' is habit – not that 'I' have habit or 'I' don't have habit! Habits help to establish escapes from facing 'what is' and keep us amused in the dimension of 'what should be'!

Habits do not merely mean smoking, drinking, marijuana, hashish, chewing tobacco and many other strange habits. Even to call oneself as British, French, German, Jew, Christian, Muslim –- except as reference or identity points -– is habit, as one seeks security by belonging to a particular religious group or to a nation. Our ground holistic Awareness is exactly the same and our separative consciousness is very similar. We are thus Universal humans in spite of our uniqueness as individual beings. This realization can bring in us an enormous security indeed–- not just our seeking security through habit formations.

Obsession and inhibition with thought, hang-ups, broodings and constant chattering also lead to habit formations, constantly searching security in one form or the other. We get into the habit of imitating others to feel secure. We steal others' manners & ideas in order to feel secure and even these stupidities become habits! Cleanliness is good, but if one becomes obsessed with it, that is also an agonizing habit formation. Contentment is good, but to cultivate contentment is habit formation. Simplicity is good, but to cultivate simplicity is habit formation. Natural state, that is, the after-state poise of Kriya is important; therefore, even Kriya Yoga must not become a habit. It would be a tragedy, if meditation becomes a habit of the mind. Meditation is a movement in the dimension of 'no-mind', that is, in the vast emptiness without the ego-center.

We are in the habit of remaining in the old-brain everlastingly seeking security through 'I-ness' in the realm of past pressures & prejudices and of future fancies & fantasies.

New-brain has no habit except brushing teeth, showering, etc. It is 'Is-ness', 'now-ness'. It is the interval between thoughts wherein resides intense insight.

Jai New brain

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
18 जून 2014

सन्देश संख्या 278

मानसिक अनुबन्धन; तृतीय

आदत–निर्माण के द्वारा सुरक्षा की कामना को तीसरे अनुबन्धन के रूप में देखा जा सकता है । वस्तुतः ''मैं'' ही आदत है, न कि ' ''मैं'' की आदत' अथवा ' ''मैं'' की आदत नहीं'। हमारी आदतें हमें ''जो है'' अर्थात् यथार्थ से पलायन में मदद करती हैं तथा 'ऐसा होना चाहिए' की अवधारणा में प्रफुल्लित रखती हैं ।

आदत का अर्थ केवल धूमपान करना, शराब पीना, गांजा–अफीम का सेवन करना, तम्बाकू चबाना तथा अन्य कई विचित्र तरीकों की आदतों से नहीं है । अपने को ब्रिटिश, फ्रेंच, जर्मन, यहूदी, ईसाई या मुस्लिम कहना भी आदत ही है, क्योंकि व्यक्ति किसी विशिष्ट धार्मिक समूह या देश से संबंधित होकर सुरक्षा चाहता है । हाँ, केवल पहचान या सन्दर्भ के लिए इन शब्दों का प्रयोग आदत नहीं है । वस्तुतः हमलोगों का मूलभूत अखण्ड चैतन्य बिल्कुल एक है और हमारी विभेदकारी चित्तवृत्ति भी एक–जैसी अर्थात् बहुत हद तक मिलती–जुलती है । इस तरह व्यक्तियों के रूप में अद्वितीय होते हुए भी हमलोग वस्तुतः सार्वभौमिक मनुष्य है। इस सत्य की अनुभूति से हमारे अन्दर प्रचण्ड सुरक्षा–भाव उत्पन्न होता है । आदतों के निर्माण द्वारा सुरक्षा चाहने से यह नहीं होता । विचार के साथ लगाव हो या विरोध हो, अवधारणा हो, चिन्तन हो या लगातार बोलते रहना हो–ये सब भी आदत का निर्माण करते हैं और उनके द्वारा व्यक्ति किसी–न–किसी रूप में सुरक्षा अनुभव करता है । सुरक्षा के अनुभव के लिए ही हम दूसरों के अनुकरण की आदत बना लेते हैं । इसी कारण हमलोग दूसरों के विचारों एवं शिष्टाचार को भी चुराते हैं और धीरे–धीरे वे भी आदत बन जाते हैं । स्वच्छता अच्छी बात है किन्तु यदि व्यक्ति को इसकी सनक हो जाय तो यही एक दुःखदायी आदत बन जाती है । सन्तोषी होना अच्छा है किन्तु कृत्रिम सन्तोष का होना एक आदत का सूचक है । सरल होना अच्छा है किन्तु कृत्रिम सरलता का होना आदत है । सहजावस्था जो क्रिया की परावस्था है, महत्वपूर्ण है, इसीलिए क्रियायोग भी आदत नहीं बनना चाहिए । यह त्रासदी ही होगी यदि ध्यान मन की आदत हो जाय । निर्मन का अर्थ है–अहं–केन्द्र से रहित असीम शून्यता को उपलब्ध होना। ध्यान वस्तुतः इसी निर्मन की अवस्था में होना है।

हमलोगों की पुराने मस्तिष्क में रहने की आदत हो गई है। यह भूत के दबावों एवं पूर्वाग्रहों तथा भविष्य की कल्पनाओं की सीमा में ''मैं–पना'' के माध्यम से सतत सुरक्षा की खोज में लगा रहना है ।

आवश्यक व्यावहारिक कार्यों जैसे कि दाँत साफ करना, स्नान करना आदि के अतिरिक्त नूतन–मस्तिष्क की कोई आदत नहीं होती । और यही अस्तित्व या वर्तमान में होना है । यह दो विचारों के मध्य का अन्तराल है जहाँ गहन अन्तर्दृष्टि का वास होता है ।

।। नूतन मस्तिष्क की जय ।।

Zvenigorod (near Moscow)
Russia, 19 June 2014

Message 279

Human Conditionings – the Fourth One.

This conditioning is making a false entity appear real, desperately giving itself continuity by hook or crook, ascribing permanency to it by calling it an "individual" or a "soul". The false entity ("I") comes into being due to the spurious split that occurs in the brain, giving rise to a false division between "I" and the contents of consciousness. The contents project the "I" and the "I" proliferates the contents. There are no Two – Adwaita! But bringing in the "two", becomes the protective mechanism of the contents of the separative consciousness, which are merely greed, fear and dependency on belief systems of the society around.

Life is never born, life never dies. So life is not interested in any "past-life regression" of the stinking psychological market nor is it interested in the stories of the past lives of Buddha which are manufactured in the Buddhism's supermarket. Life is also not interested in the Bhrigu-Samhita blah blah of Hindus describing the past lives of a customer who visits such an "expert" in India. Life is also not interested in any "after life" – like the savior or Allah allotting a bungalow in Heaven depending on whether one is church-going Christian or a mosque-visiting Muslim. Nor is life interested in taking rebirth after rebirth like Hindus, Buddhists and Jains, as life never dies.

All this is assumed by the shoddy little non-existent "I", under the influence of cultural inputs, conditionings, social customs & conventions and environmental factors. Thereby "I" asserts that it indeed exists. Once one American Professor of Theology, during his presence in one of the Swadhyay Talks (teaching sessions), went almost mad after hearing this truth about the false "I". This "I" projects "God" – the ultimate greed, gratification, delusion & dependency.

When all this is understood without intervention of 'time' as "I", that is, when this comprehension happens instantaneously, the false "I" falls. "God" also falls. The whole garbage-contents of the inner-being also fall. In this enormous and magnificent Fall, Full and Fabulous Divinity –- the Un-nameable, Immeasurable & Unknowable suddenly dawns as 'Flashes' along with the devastation and demolition of the petty and phony ego-experience structure!

Is it possible to come out of the strong stranglehold of this fourth conditioning? Find out by and for yourself –- don't follow anybody!

Jai Non-following

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
19 जून 2014

सन्देश संख्या 279

मानसिक अनुबन्धन; चतुर्थ

इस अनुबन्धन के कारण एक भ्रान्ति भी वास्तविक प्रतीत होती है और वहाँ अपने आपको एक विशिष्ट ''व्यक्ति'' या ''आत्मा'' का नाम देकर येन–केन प्रकारेण स्वयं को निरन्तरता और स्थायित्व देने का सतत प्रयास करती है । इस भ्रान्ति अर्थात् ''मैं'' का जन्म मस्तिष्क में चित्तवृत्ति के प्रत्येक अवयव के सम्बन्ध में ''मैं'' और अवयव के रूप में होने वाले मिथ्या विखण्डन के कारण होता है । इस तरह चित्तवृत्ति के अवयव ही ''मैं'' को जन्म देते हैं और ''मैं'' अवयवों को निरंतर विस्तार प्रदान करता है। वस्तुतः यहाँ द्वैत नहीं है, अद्वैत है। चित्तवृत्ति के मुख्य अवयव हैं–लोभ, भय और समाज की विश्वास पद्धतियों पर निर्भरता । और यहाँ द्वैत का बने रहना हमेशा ही विभेदकारी चित्तवृत्ति के इन अवयवों की सुरक्षा एवं संरक्षण में सहायक होता है ।

जीवन न कभी जन्म लेता है और न ही कभी मरता है । अतः मानसिक शोषण के लिए बाजार में उपलब्ध पिछले जन्म की कहानियों में जीवन की कोई रूचि नहीं होती है और न ही बौद्धों के सुपर मार्केट में बनाई गई बुद्ध के पिछले जन्मों की कहानियों में । हिन्दुओं की भृगु–संहिता जैसे ग्रन्थों में भी जीवन की कोई रूचि नहीं होती, जिसमें ग्राहक के पिछले जन्मों की कहानी वर्णित है और ग्राहक पिछले जन्मों की तथाकथित भारतीय विशेषज्ञ से मिलता रहता है । चर्च जाने वाले ईसाईयों का ''अगले–जन्म'' में उद्धारक द्वारा उद्धार किया जाएगा या मस्जिद जाने वाले मुस्लिमों को अल्लाह अगले–जन्म में स्वर्ग में बंगला देंगे, जैसी कहानियों में भी जीवन की कोई रूचि नहीं होती और न ही जीवन की रूचि हिन्दुओं, बौद्धों और जैनों में होने वाले बार–बार पुनर्जन्म की कहानी में होती है क्योंकि जीवन कभी मरता ही नहीं ।

सांस्कृतिक जानकारियों, अनुबन्धनों, सामाजिक परम्पराओं एवं प्रथाओं और पर्यावरणीय कारकों के प्रभाव के कारण भ्रान्ति ''मैं'' यह सब कुछ केवल मान भर लेता है । इसीलिए ''मैं'' यह दावा करता है कि उसका अस्तित्व है। एक बार एक स्वाध्याय वार्ता में उपस्थित धर्मशास्त्र का एक अमरीकी प्राध्यापक भ्रान्ति ''मैं'' की सच्चाई सुनकर पागल की तरह व्यवहार करने लगा था। यही ''मैं'' ''ईश्वर'' को प्रक्षेपित करता है जो कि उसके चरम लोभ, तुष्टीकरण, भ्रान्ति और निर्भरता का ही प्रतीक है।

जब यह सब ''मैं'' रूपी समय के हस्तक्षेप के बिना समझ में आ जाय अर्थात् जब यह समझदारी तत्क्षण घटित हो जाय तब भ्रान्ति ''मैं'' समाप्त हो जाता है । और तब ''ईश्वर'' भी समाप्त हो जाता है । अन्तर–अस्तित्व में संचित सभी प्रकार के प्रदूषण रूपी अवयव भी समाप्त हो जाते हैं । इस बृहद् एवं भव्य समाप्ति में ही पूर्ण एवं विस्मयकारी भगवत्ता जो अनाम है, असीम है, अज्ञेय है–का सहसा एक ''झलक'' के रूप में उदय होता है । और इसी के साथ ही तुच्छ एवं काल्पनिक ''मैं'' की अनुभव–संरचना भी ध्वस्त हो जाती है ।

क्या इस चतुर्थ अनुबन्धन के शक्तिशाली बन्धन से मुक्त होना सम्भव है? किसी का भी अनुकरण मत करो, बल्कि स्वयं इसका पता लगाओ ।

। अनुकरण से मुक्ति की जय ।

Zvenigorod (near Moscow)
Russia, 20 June 2014

Message 280

Human Conditionings – the Fifth One.

Wasting energy in seeking 'what should be' – thereby not gathering energy in seeing 'what is' – is our unfortunate fifth conditioning! Can this seeing happen in the dimension of holistic awareness, that is, without the dichotomy between the observer and the observed?

Through this conditioning, we build up and defend all kinds of images about ourselves and others, we harbor secret motives in our day-to-day relationship and activities, we run into pleasures and pursuits of all kinds of belief-systems & dogmas!

Through this conditioning, space and sequence in space in the inner-being is denied. We are then engaged in thoughts fortifying 'thinker' – the 'I' – and thinker, in turn, multiplying thoughts. Thus we get overcrowded by thoughts.

Space in the inner being is the dimension of 'no-thought' and in this space technical thoughts can prevail in proper sequence for performing daily tasks, as and when required. This is Mind in Meditation – ending of all disorder in the inner-being! Space in the inner-being is order!

Seeking 'God' is not meditation, it is not holy. It is the paradox and perversion of this conditioning of escaping from 'what is'. There is nothing to seek, nothing to find! Just wake up to see 'what is'. Be in 'No-I'! Be in Divinity! Be in Life! Keeping vagaries of mind dominant and the veracity of life dormant, is a part of this conditioning!

Kriyabans say that they come to Shibendu for getting the "Insight"! Insight does not belong to anybody. It is all-pervading as sustained Intelligence. It is neither yours, nor mine. It is not a technical knowledge for giving and getting. It is for sharing in the goodness of Life – the 'no-mind'.

"Time" weekly dated April 21, 2014, reported the following fact. American spending on pets (mainly dogs) reached a record high, US Dollar 55.7 billion last year (2013). And millions of human beings on this planet do not get even one square meal a day!

Missionaries come to India to help in tribal areas and in the process they place their burdens of belief-systems on these simple folks. Their joyful natural music and dance become notorious mind dogmas which are imposed on them in the name of Sin and Savior! Conversion becomes perversion!

Can we be free from such escapes from reality in spite of our heavy conditioning to the contrary?!!

Jai 'What is'

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
20 जून 2014

सन्देश संख्या 280

मानसिक अनुबन्धन; पंचम

''ऐसा होना चाहिए'' की लालसा में ऊर्जा का क्षय और इसकी वजह से 'जो है' के द्रष्टारहित दर्शन से उत्पन्न ऊर्जा–संचयन से वंचित रह जाना–हमलोगों का दुर्भाग्यपूर्ण पाँचवा अनुबन्धन है । अखण्ड सजगता के आयाम में इसका द्रष्टारहित दर्शन सम्भव है क्या?

इस अनुबन्धन के कारण हमलोग स्वंय के तथा दूसरों के विषय में नाना प्रकार की छवियाँ निर्मित कर लेते हैं और उन छवियों की रक्षा में लगे रहते हैं। हमलोग अपने दैनन्दिन सम्बन्धों एवं कार्यकलापों में भी मन में गुप्त अभिप्राय रखते हैं, हमलोग समस्त प्रकार की विश्वास–पद्धतियों एवं मतों के अनुपालन में सुख अनुभव करने लगते हैं ।

पुनः इस अनुबन्धन के कारण अन्तर–अस्तित्व, दो विचारों के मध्य अन्तराल, अर्थात् शून्यता के अनुक्रम और आशीर्वाद से वंचित रह जाता है । और हमलोग विचारों में लिप्त हो जाते हैं । फलतः 'विचारक' के रूप में ''मैं'' और मजबूत होता है और बदले में, विचारक विचारों की और वृद्धि करता है । इस तरह, हमलोग विचारों की बाढ़ में डूब जाते हैं ।

अन्तर–अस्तित्व में शून्यता निर्मन की अवस्था है और इसी शून्यता में, आवश्यकतानुसार दैनिक कार्यों के सम्पादन हेतु उचित क्रम में तकनीकी विचार भी आ सकते हैं । यही ध्यानशील मन है । इस अवस्था में अन्तर–अस्तित्व के समस्त विकार और अराजकता समाप्त हो जाती है । अन्तर–अस्तित्व में शून्यता ही सुव्यवस्था और सौंदर्य है ।

''ईश्वर'' की खोज न ध्यान है और न ही पवित्रता है । यह तो ''जो है'' से पलायन रूपी अनुबन्धन की विडम्बना एवं विकृति है । वस्तुतः न तो कुछ खोजने को है और न ही कुछ पाने को। केवल 'जो है' को देखने के लिए जागने की आवश्यकता है । अतः 'निर्–मैं' में रहो । भगवत्ता में रहो । जीवन में रहो । मन की मौज को मजबूत बनाना तथा जीवन की समझदारी को कमजोर करना, इस अनुबन्धन का ही हिस्सा है ।

क्रियावान कहते हैं कि वे शिवेन्दु के पास ''अन्तर्दृष्टि'' पाने हेतु आते हैं। अन्तर्दृष्टि किसी व्यक्ति विशेष की नहीं होती । अखण्ड चैतन्य के रूप में यह सर्वत्र व्याप्त है । यह न तुम्हारा है, न मेरा है । यह कोई दी और ली जाने वाली तकनीकी जानकारी नहीं है । यह जीवन की धन्यता में अर्थात् निर्मनावस्था में साझेदारी के लिए होती है ।

21 अप्रील 2014 की साप्ताहिक पत्रिका ''टाईम'' ने निम्नलिखित तथ्य प्रकाशित किया है । पिछले वर्ष 2013 में अमेरिकियों द्वारा पालतू पशुओं, मुख्यतः कुत्तों पर खर्च की जाने वाली राशि अभी तक के अधिकतम 55,700 अरब अमरीकी डॉलर तक पहुँच गई है। दूसरी तरफ आज भी इस धरती पर लाखों लोगों को एक वक्त का भोजन भी नसीब नहीं होता ।

मिशनरी लोग आदिवासी क्षेत्रों में मदद के लिए भारत आते हैं और इसी क्रम में वे भोले–भाले आदिवासी लोगों के ऊपर अपनी विश्वास–पद्धतियों का बोझ लाद देते हैं । उन पर लादे गए पाप और तथाकथित उद्धारक की अवधारणाओं के कारण उनका आनन्दपूर्ण तथा स्वाभाविक नृत्य एवं संगीत भी बदनाम हो जाता है । धर्म परिवर्तन विकृति है ।

अपने गहरे अनुबन्धनों, जो कि मुक्ति के विपरित हैं, के बावजूद क्या हमलोग यथार्थ अर्थात् ''जो है'' से ऐसे पलायनों से मुक्त हो सकते हैं?

।। ''जो है'' की जय ।।

Zvenigorod (near Moscow)

Russia, 21 June 2014

Message 281

Human Conditionings – the Sixth One.

This is the concluding message on conditioning which does not mean that we are victims of only six conditionings. Freedom flowers when conditionings are watched… without the watcher! Kriyabans are most cordially invited to look within themselves, as also around, to wake up to many other conditionings. They may also write messages on conditioning, if possible, and send them to Mr. Gopi Menon, Indian Coordinator, for consideration, contemplation and circulation; if he finds it comprehensive and constructive. We know that deconditioning happens through the understanding & practice of Kriya Yoga.

The sixth conditioning is our infatuation with words and the tremendous impact & influence which words have upon us. We are hardly capable of listening behind the word, beyond the word to capture the wisdom being communicated through the word. We interpret in accordance with our pre-concepts and pre-determined conclusions and thus miss the insight.

When there is no insight we merely formulate ideas. We then accept or reject the idea. And both are death! Because they deny Awareness of the Real! Veracity is lost through verbalization! Now is 'no – w', which indicates no wicked activities of the mind –– the separative consciousness! 'Now-ness' is 'Is-ness', that is, no 'I – ness'! And wisdom is where there is no 'I', 'I', 'I' and 'You', 'You', 'You'. No 'I-ness' is the door to Divinity, the Universal Intelligence!

Among the words, our clinging is towards the nouns –– not towards the verbs! We talk of life as per our concepts, but what is important is living! It is loving that matters, not "love"! It is relating, not just relationship. It is singing, not just song. It is doing, not merely jobbery. It is dancing in ecstasy, not just a dance performance. It is self-knowing, not the so-called "self-knowledge". It is moving in holistic awareness –– without the dichotomy between thinker and thought, which are nouns.

Life cannot leave Kriya Yoga. Mind cannot maintain Kriya Yoga. Love is the art of being with others. Meditation is the art of being with oneself. The heart is your relationship with existence. The head is your relationship with experience.

Jai Beyond Words

वेनीगोरोद (मास्को के निकट), रूस
21 जून 2014

सन्देश संख्या 281

मानसिक अनुबन्धन; षष्ठ

यह अनुबन्धन के ऊपर अन्तिम सन्देश है । किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि हमलोग केवल छः अनुबन्धनों के ही शिकार हैं । मुक्ति तभी प्रस्फुटित –पुष्पित होती है जब अनुबन्धनों का द्रष्टारहित दर्शन होता है । क्रियावानों को हार्दिक आमन्त्रण है कि वे अपने अन्दर देखें और अपने चारों ओर देखें ताकि वे कई अन्य अनुबन्धनों पर भी जागृत हो सकें । यदि सम्भव हो तो वे भी अनुबन्धन पर सन्देश लिख सकते हैं और उन्हें भारतीय संयोजक श्री गोपी मेनन के पास मनन एवं ध्यान हेतु भेज सकते हैं । यदि श्री गोपी मेनन द्वारा वे सन्देश व्यापक एवं रचनात्मक पाये जाते हैं तो वे उनका प्रसार भी कर सकते हैं। हमलोग जानते हैं कि समझदारी और क्रियायोग अभ्यास के द्वारा अनुबन्धनों से मुक्ति घटित होती है ।

शब्दों का हमारे ऊपर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । शब्दों के प्रति हमारा मोह ही छठा अनुबन्धन है । हम शब्दों के परे के मर्मार्थ को नहीं सुन पाते और इसीलिए शब्दों के द्वारा जो प्रज्ञा प्रेषित की जा रही है, वह नहीं जान पाते । हमलोग पूर्वधारणाओं एवं पूर्वाग्रहों के आधार पर शब्दों की व्याख्या करते हैं और इस प्रकार प्रज्ञा एवं अन्तर्दृष्टि से वंचित रह जाते हैं ।

अन्तर्दृष्टि के अभाव में हम सिर्फ धारणा बनाते हैं । उसी के आधार पर हम विचारों को या तो स्वीकार करते हैं या अस्वीकार करते हैं । ये दोनों ही मृत्यु हैं । क्योंकि ये दोनों यथार्थ के प्रति सजगता से वंचित करते हैं । शाब्दिक अभिव्यक्ति में सत्यता एवं समझदारी खो जाती है । वर्तमान का अर्थ है–मन अर्थात् विभेदकारी चित्तवृत्ति की स्वार्थपूर्ण गतिविधियों से परे होना । अतः वर्तमान ही अस्तित्व है और ''मैं–पना'' से परे है । प्रज्ञा वहीं होती है जहाँ ''मैं'', ''मैं'', ''मैं'' और ''तुम'', ''तुम'',''तुम'' नहीं होते । ''मैं–पना'' से परे होना ही भगवत्ता यानि कि सर्वव्यापी चैतन्य का द्वार है ।

शब्दों में हमारी आसक्ति संज्ञाओं के प्रति होती है, क्रियाओं के प्रति नहीं। हमलोग अपनी अवधारणाओं के आधार पर जीवन के बारे में बात करते हैं जबकि महत्वपूर्ण है – जीना । प्रेम करना महत्वपूर्ण है, न कि ''प्रेम''। सम्बन्ध का होना महत्वपूर्ण है, न कि मात्र सम्बन्ध । गाना महत्वपूर्ण है, न कि केवल गीत । करना महत्वपूर्ण है, न कि कार्य । आनन्द में नृत्य करना महत्वपूर्ण है, न कि केवल नृत्य। स्वयं अनुभूत ज्ञान महत्वपूर्ण है, न कि तथाकथित अपनी जानकारी । विभाजन रहित अखण्ड सजगता में होना महत्वपूर्ण है, न कि संज्ञा रूपी विचारक और विचार के मध्य विभाजन ।

जीवन क्रियायोग नहीं त्याग सकता और मन क्रियायोग में रह नहीं सकता। प्रेम दूसरों के साथ होने की कला है जबकि ध्यान स्वयं के साथ होने की कला है । अस्तित्व के साथ तुम्हारा संबंध हृदय है, जबकि अनुभवों के साथ तुम्हारा संबंध मस्तिष्क है ।

।। शब्दों के परे की जय ।।

New Delhi, India
30 July 2014

Message 284

Human Conditionings – the Seventh One.

'I' functioning efficiently in the centrifugal dimension of practical living in the technical arena may also degenerate as yet another conditioning preventing the perception of a profound Insight during conversation with one who speaks without 'speakership'! This conditioning of providing continuity to 'I' by all means available to oneself, blocks listening in a state of let-go, in a state of life, in an utter passivity without any form of pursuit of 'becoming' whatsoever. The listening must not degenerate giving rise to yet another maneuver of agony, of longing. Can one listen with Insight only, without any trace of 'I-ness' contaminating the Insight? Then only a complete assimilation of the separative consciousness in the holistic Awareness is possible leading to a radical change, a fundamental transformation, a total Freedom – the Jivan Mukti. Please listen with your whole life, without any interference from the shoddy little 'man-made' mind, that is, without the pressure and prejudice from cultural inputs, brain-washings, beliefs, disbeliefs and other psychological investments – positive or negative. Let Insight listen, not 'I'!

Some Perceptions:

1) The key question is: Is it possible to live without relying psychologically on any authority – either external or even on the authority of one's own past experience? The distorting weight of what one accumulates is precisely the problem.
2) No theoretical punch lines, but perception of the truth of 'What is', directly by and for oneself, is Insight.
3) What is essential is to understand this deep hidden want – which is always changing! And then one comes upon this wonderful wisdom of 'no-Wanting'!
4) As long as 'I' spawns its own fears in psychological time, it is incapable of understanding the 'Timeless'.
5) When energy is not dissipated through various escapes, then that energy becomes the flame of compassion.
6) Can you break your pride or ambition by becoming a monk, a nun, or a hermit? No! It has to happen instantaneously without 'time' sneaking in surreptitiously! Either it happens NOW or never!
7) Freedom is a state per se – to be perceived – not because one is against something!
8) Can one be skeptical about one's own demands, to question them, to doubt them?
9) Ecstasy is not personal; ecstasy is not yours or mine, just as love is not yours or mine.

Jai Ecstasy

नई दिल्ली
30 जुलाई 2014

सन्देश संख्या 284

मानसिक अनुबन्धन; सप्तम

तकनीकी क्षेत्रों में यानी कि बाहरी व्यवहारिक जीवन में समन्वयक का कार्य कुशलतापूर्वक करता हुआ भी ''मैं'' ऐसे मानसिक अनुबन्धन से ग्रस्त हो सकता है जो वक्ताभाव रहित व्यक्ति के साथ हो रही बातचीत के दौरान भी होने वाली गहन अन्तर्दृष्टि के बोध को रोकता है। अपने समस्त उपलब्ध साधनों से ''मैं'' को सततता प्रदान करने का यह अनुबन्धन जीवन के तल पर प्रयत्न–शैथिल्य की अवस्था में, कुछ और 'बनने' की समस्त आपाधापी से मुक्त होकर अर्थात् साक्षीभाव में सुनने से रोकता है। ''मैं'' की चाहने–पाने की धूर्तता के कारण ही साक्षी–भाव में सुनना सम्भव नहीं होता। ''मैं–पना'' के प्रदूषण से मुक्त, केवल अन्तर्दृष्टि के साथ सुनना सम्भव है क्या? ''मैं–पना'' रहित श्रवण में ही विभेदकारी चित्तवृत्ति का पूर्ण सजगता में विलय सम्भव है और उसी से मूलभूत रूपान्तरण अर्थात् पूर्ण मुक्ति या जीवनमुक्ति सम्भव है। अतः 'मानव–निर्मित' क्षुद्र मन के हस्तक्षेप से मुक्त रहकर सुनें अर्थात् अपनी जानकारी के पूर्वाग्रहों, दबावों, विश्वासों, अविश्वासों, दूसरों द्वारा की गई मगज धुलाई आदि, चाहे वे सकारात्मक हों या नकारात्मक हों, से मुक्त होकर सुनें। अन्तर्दृष्टि को सुनने दें, न कि ''मैं'' को।

कुछ बोध–उक्तियाँ:–

(1) मुख्य प्रश्न है : मानसिक रूप से किसी सत्ता पर आश्रित हुए बिना जीना सम्भव है क्या ? यह सत्ता बाहरी हो सकती है या अपने ही पूर्ण अनुभवों की सत्ता भी हो सकती है। व्यक्ति जो भी अनुभव संग्रह करता है, उसका दबाव ही मुख्य समस्या है।

(2) अन्तर्दृष्टि के सम्बन्ध में कोई सिद्धान्त नहीं हो सकता। वस्तुतः स्वयं द्वारा स्वयं के लिए ''जो है'' रुपी सत्य का बोध ही अन्तर्दृष्टि है।

(3) अपनी गहरी गुप्त कामना को समझना ही महत्वपूर्ण है जो हमेशा बदलती रहती है। इस समझदारी के बाद ही कामना–मुक्त होने की अद्‌भुत प्रज्ञा का उदय होता है।

(4) जब तक ''मैं'' अपने भय को विस्तार देकर उसे मानसिक–काल में ले जाता रहेगा, तब तक वह कालातीत को जानने में असमर्थ होगा।

(5) जब किसी भी मार्ग से ऊर्जा का क्षरण नहीं होता, तब संचित ऊर्जा ही करूणा की शिखा के रूप में प्रकट होती है।

(6) क्या तुम एक भिक्षु, नन या साधु बनकर अपने दर्प या अहंकार को समाप्त कर सकते हो? नहीं। इसे तत्क्षण घटित होना होगा। वह ''अभी'' अर्थात् वर्तमान में ही घटित होता है, बाद में कभी नहीं होता।

(7) सहजावस्था अर्थात् प्रत्यक्ष–बोध में होना ही स्वतंत्रता है। किसी के विरोध में होना स्वतंत्रता नहीं है।

(8) क्या कोई अपनी ही इच्छाओं के विरुद्ध प्रश्न पूछ सकता है ? उन पर संशय कर सकता है ?

(9) परमानन्द वैयक्तिक नहीं होता। यह ठीक उसी प्रकार आपका या मेरा नहीं होता जिस प्रकार प्रेम आपका या मेरा नहीं होता।

।। जय परमानन्द ।।

Asheville, North Carolina, USA,
August 12, 2014

Message 287

Human Conditionings – the Eighth One

We are accustomed to measurement in the functional-technical world which is indeed so beneficial. When we construct a bridge or a house, an airplane, a submarine, a spaceship, a highway, a shopping mall, and so on, there are meticulous and careful measurements galore in so many dimensions.

But when this centrifugal affair is dragged in the centripetal, it becomes notorious and nasty conditioning, giving rise to complicated psychological problems. We run into a horrible area of comparison, competition, envy, fear, cravings, jealousy, intolerance, illusions, ache, agony, pursuits, paradoxes, and what not.

'You' are tall, 'I' am short

'You' are white, 'I' am black

'You' are handsome and beautiful, 'I' am not

'You' are a manager, 'I' am a clerk

'You' are rich, 'I' am poor

'You' are successful, 'I' am a failure…and so on.

Are such psychological measurements necessary? Are these needed for our peace, protection, progress and prosperity?

Find out by and for yourself. Be a light to yourself. Don't belong to a flock of sheep to remain in the stupidity of the so-called "social values"!

Some Perceptions :

1) Love never dies through separation, never. If at all, it does so through too much proximity.

2) Ninety percent of language is an avoidance of love in relationship. We created a great wall of words to hide the fact of fragmentation ('I'-ness) in our relationship.

3) Love is Sacred Art.

4) Don't feast; don't fast.

5) Find out an area of the brain which has remained untouched by the pursuit of becoming! This area is available to the Source, to the Ground.

6) Experience-structure or 'I'-ness, entangled in vanity and vested interests, cannot touch this Existential Vitality, Virtue and Veracity! All "your spiritual experiences" are stinking shits!

7) Insight belongs to 'None or 'No-One'! "I" and "you" belong to all bullshits!

Jai "No-Measurement"

अशेविले, उत्तरी करोलिना, अमेरिका
12 अगस्त 2014

सन्देश संख्या 287

मानसिक अनुबन्धन; अष्टम

हमलोग तकनीकी क्षेत्र में माप–तौल के अभ्यस्त हैं, जो वस्तुतः बहुत उपयोगी भी है । जब हमलोग पुल, घर, हवाई जहाज, पनडुब्बी जहाज, अन्तरिक्ष यान, सड़क या दुकान आदि बनाते हैं तब सावधानीपूर्वक एवं सूक्ष्मता से कई प्रकार से माप–जोख करने की आवश्यकता होती है ।

किन्तु जब इस बाहरी माप–जोख का उपयोग अन्तर्जगत में किया जाता है तब यह एक खतरनाक अनुबन्धन बन जाता है । फिर यही अनुबन्धन कई प्रकार की जटिल मानसिक समस्याओं को जन्म देता है और हमलोग तुलना, प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या, भय, लोभ, द्वेष, असहिष्णुता, भ्रान्ति, मानसिक पीड़ा, द्वन्द्व आदि में फँस जाते हैं, जैसे कि –

''तुम'' लम्बे हो, ''मैं'' छोटा हूँ,
''तुम'' गोरे हो, ''मैं'' काला हूँ,
''तुम'' सुन्दर हो, ''मैं'' कुरूप हूँ,
''तुम'' प्रबन्धक हो, ''मैं'' किरानी हूँ,
''तुम'' धनी हो, ''मैं'' निर्धन हूँ,
''तुम'' सफल हो, ''मैं'' असफल हूँ, आदि–आदि ।

जीवन जीने के लिए ऐसे मानसिक माप एवं तुलना आवश्यक है क्या? क्या ये हमारी शान्ति, सुरक्षा, प्रगति– एवं समृद्धि के लिए आवश्यक हैं?

अपने लिए इन प्रश्नों के उत्तर स्वयं खोजो । अपना प्रकाश स्वयं बनो । भेड़ की तरह अंधानुकरण कर तथाकथित ''सामाजिक–मूल्यों'' की मूढ़ता में मत फँसो ।

कुछ बोध–उक्तियाँ :–

(1) अलगाव और दूरी से प्रेम कभी भी समाप्त नहीं होता । यदि कभी समाप्त होता है तो वह अत्यधिक निकटता के कारण ही होता है ।

(2) भाषा के नब्बे–प्रतिशत शब्द हमारे आपसी सम्बन्धों में दूरी बनाये रखने के लिए हैं । हमलोगों ने शब्दों की एक बहुत बड़ी दीवार खड़ी कर ली है ताकि अपने सम्बन्धों में ''मैं–पना'' रुपी विभाजन के तथ्य को छुपाया जा सके।

(3) प्रेम पवित्र कला है ।

(4) न अधिक भोजन करो और न ही भोजन का त्याग करो ।

(5) मस्तिष्क के उस हिस्से का पता लगाओ जो और कुछ ''बनने'' की आपाधापी से अनछुआ रह गया है । वह हिस्सा ही जीवन का मूल स्रोत है, मूल आधार है ।

(6) अनुभवों का जाल ''मैं–पना'', अहंकार और स्वार्थ के इर्द–गिर्द ही घूमता है और इसीलिए यह परम पवित्र अस्तित्वमय जीवन्तता, ऊर्जा और अन्तर्दृष्टि को स्पर्श नहीं कर सकता । तुम्हारे तथाकथित आध्यात्मिक अनुभवों में कुछ भी सत्य नहीं है, सभी बकवास है ।

(7) अन्तर्दृष्टि का उदय ''निर्–मैं'' या निर्मन की अवस्था में होती है जबकि ''मैं'' और ''तुम'' मानसिक गन्दगी और कीचड़ से निकलते हैं ।

॥ माप से मुक्ति की जय ॥

Asheville, North Carolina, USA,
August 22, 2014

Message 288

Human Conditionings – the Ninth One

Trying to dominate others, to throw one's weight on others, to influence others by hook or by crook – such everlasting or ever-growing tendencies – is this yet not another unfortunate conditioning?

Domination in the work place of a man is passed on to his wife when he returns to his house. She then passes the domination on to her children or to her servant/help whenever she finds an opportunity to do so. Even the children will become conditioned to dominate one another.

Is it possible to live life without this conditioning of the mind interfering? Is it not possible to live with enormous comprehension, courtesy, love, mutual respect – spontaneously and naturally – not as a cultivated ideal of a sect or cult? Domination often comes in the form of proselytization, where someone – under the guise of congeniality or friendship – will assert their religious beliefs on another, trying to convert them to their belief system, thereby gaining a sense of control and self-gratification.

Let us find this out by and for ourselves in the dimension of holistic awareness, not as yet another activity of our separative or divisive consciousness.

Three perceptions:

1. Agitation (inside) is tiresome noise, debilitating and depressing, whereas attention in choicelessness is silent rejuvenation – an energy of existence: so joyful.

2. Learning – not 'I' learning – is a movement in the dimension of "No-I", a pious and perceptive phenomenon of Insight. And this brings about immediate action.

3. Real learning – not merely following or imitating – is an outcome of that listening which happens without any intention or barrier from the mind or from the 'I'. Such a mind puts aside all opinions, conjectures, experiences, and so on. One is then available to the intensity and benediction of the Omnipresence Un-Nameable.

Jai Omnipresence

अशेविले, नार्थ करोलिना, अमेरिका
22 अगस्त 2014

सन्देश संख्या 288

मानसिक अनुबन्धन; नवम

अपनी सत्ता एवं शक्ति का प्रदर्शन कर दूसरों पर रोब गाँठना, हावी होने का प्रयास करना, किसी भी प्रकार से प्रभावित करने की कोशिश करना – सदा बढ़ने वाली तथा कभी समाप्त न होनेवाली ऐसी प्रवृत्ति का होना भी एक और दुर्भाग्यिपूर्ण मानसिक अनुबन्धन है ।

कार्यस्थल पर अपने अधिकारी का अनुचित शासन एवं रोब सहन करने वाला व्यक्ति जब घर आता है तब वह अपनी पत्नी पर रोब गाँठने लगता है । बदले में, वह भी जब अवसर मिलता है, अपने बच्चों या नौकरों पर रोब गाँठती है । फलस्वरूप, बच्चे भी दूसरों पर रोब गाँठने के अनुबन्धन से ग्रसित हो जाते हैं ।

मन की इस प्रवृत्ति, इस अनुबन्धन से मुक्त होकर जीवन जीना सम्भव है क्या? किसी पंथ या सम्प्रदाय द्वारा सिखाने गए कृत्रिम आदर्शों के कारण नहीं, अपितु स्वतःस्फूर्त एवं सहज समझदारी, शिष्टाचार, प्रेम एवं परस्पर आदरभाव के साथ जीवन जीना सम्भव नहीं है क्या? धर्मपरिवर्तन भी प्रायः शासन एवं नियन्त्रण करने के लिए कराया जाता है । धर्मपरिवर्तन कराने वाले सर्वप्रथम लोगों के साथ अपनापन एवं मित्रता का पाखण्ड करते हैं और बाद में उन पर अपनी धार्मिक विश्वास–पद्धतियों को थोपकर उनका धर्मपरिवर्तन कराते हैं । इस तरह वे दूसरों पर नियन्त्रण रखने की अपनी इच्छा की ही तुष्टि करते हैं।

उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर हमलोग पूर्ण सजगता की अवस्था में अपने लिए स्वयं खोजें, नहीं तो, यह खोज की हमारी विभेदकारी चित्तवृत्ति की एक और धूर्तता हो सकती है ।

तीन बोध–उक्तियाँ :–

(1) अन्तर्जगत की उत्तेजना थकाऊ कोलाहल है, जो कमजोर करने वाली तथा दुःख–विषाद उत्पन्न करने वाली है, जबकि निर्विकल्प अवस्था की शान्ति स्वतः शक्ति देनेवाली है, अस्तित्वमय ऊर्जा है और परमानन्द है ।

(2) जानना जब ''निर–मैं'' के आयाम में होता है अर्थात् जहाँ जानना 'मैं' द्वारा घटित नहीं होता, तभी वह वास्तविक जानना है । वही पवित्र और अन्तर्दृष्टि का प्रत्यक्षबोध है । इस जानना का परिणाम तत्क्षण घटित होता है ।

(3) दूसरों का अनुकरण या अनुसरण करना वस्तुतः जानना नहीं है, वह तो निरुद्देश्य अर्थात् ''मैं'' के हस्तक्षेप से मुक्त होकर सुनने से ही संभव है। समस्त प्रकार के मतों, अनुमानों, अनुभवों एवं उनसे उत्पन्न पूर्वाग्रहों से मुक्त व्यक्ति ही सर्वव्यापी एवं अनाम अस्तित्व की परम कृपा को उपलब्ध होता है।

।। सर्वव्यापकता की जय ।।

Asheville, North Carolina, USA,
August 24, 2014

Message 289

Human Conditionings – the Tenth One

This message has been written by a very-good-brain devotee – indeed brilliant in the energy of understanding:

"Human beings are conditioned to take shortcuts; One always resorts to taking shortcuts. This conditioning is not so harmful in the technical field, where there is a scope for taking a shortcut. But in the centripetal dimension this conditioning wreaks havoc.

"We are always on the lookout for shortcuts: to reach a destination quickly, to get rich quickly, to get fame quickly, to get slim quickly and even to reach "God" quickly. Some run to Gurus to get Samadhi instantaneously.

"The 'Book of Self' has to be read meticulously and thoroughly without skipping pages. One can proceed to the next page only after reading and understanding the preceding page. No shortcut is of any help here. It is because of shortcuts taken here that we are so hopelessly caught up in this illusion "I".

"How many of us go beyond the words. The messages are only to inspire us to go deeper into the understanding of the self and its ways. When it is said do not follow anyone, we accept it but don't go deeper as to why it has been said so. We merely follow the advice of "not following". Thus, "following" as well as "not following" become shortcuts too.

"Again when we have any problem we want to quickly get rid of it. We are not interested in understanding what the problem is and why it is there in the first place. We look for a solution to it as if the problem and solution are separate. The solution is in the problem itself! Yet we prefer the shortcut solution than the actual understanding of the problem because that is much more tedious.

"What we do not realize is that these shortcuts are actually making the whole process of understanding longer. Shortcuts are possible where there is a route but understanding has no route so there is no question of shortcut. Energy of Understanding is the roar of a Lion of Life!"

Notes :

1. Listen to the following Beatles song :

"Within You Without You" – The Beatles

We were talking, about the space between us all

And the people, who hide themselves behind a wall of illusion

Never glimpse of truth, then it's far too late, when they pass away

We were talking, about the love we could all share, when we find it

To try our best to hold it there, with our love

With our love, we could save the world, if they only knew

Try to realize it's all within yourself no-one else can make you change

And to see you're really only very small,

And life flows on within and without you

We were talking, about the love that's gone so cold and the people,

Who gain the world and lose their soul

Then you may find, peace of mind, is waiting there

And the time will come when you see we're all one,

And life flows on within and without you

2. Awareness of ambition, of becoming, is the abrogation of greed, of fear, of dependency on belief systems.
3. Serene dimension of action of perception is the sacred dance of Life in wisdom. It is the dance of moonlight on the ripples of a still lake.

Jai Dance

आशेविले, नॉर्थ करोलिना
अमेरिका, 24 अगस्त 2014

सन्देश संख्या 289

मानसिक अनुबन्धन; दसम

यह सन्देश समझदारी की ऊर्जा को उपलब्ध एक अत्यन्त कुशाग्रबुद्धि भक्त द्वारा लिखा गया है ।

''मनुष्य सुगम मार्ग यानी कि आरामदायक रास्ता चुनने के लिए अनुबन्धित होता है । इसीलिए वह सदैव सुगम मार्ग ही अपनाता है । तकनीकी दुनिया में, जहाँ सुगम या छोटा रास्ता सम्भव है, वहाँ यह अनुबन्धन हानिकारक नहीं है । किन्तु अन्तर्मुखी यात्रा में यह अनुबन्धन विध्वंसकारी है ।

हमलोग हमेशा ही छोटे और सुगम रास्ते की तलाश में रहते हैं ताकि गन्तव्य तक शीघ्र पहुँचा जा सके । यथा– शीघ्र धनी हुआ जा सके, शीघ्र यश पाया जा सके, शीघ्र दुबला हुआ जा सके और यहाँ तक कि शीघ्र ही ''ईश्वर'' तक भी पहुँचा जा सके । कुछ लोग तो गुरू के पास इसीलिए जाते हैं कि तत्क्षण उनकी समाधि लग जाये ।

''मैं'' की पुस्तक–को बहुत सावधानीपूर्वक एवं सम्पूर्णता में पढ़ने की आवश्यकता है अर्थात् इस पुस्तक का कोई भी पृष्ठ छूटना नहीं चाहिए । इसमें व्यक्ति अगले पृष्ठ में तभी जाता है जब वह पूर्व पृष्ठ को अच्छी तरह समझ लेता है । यहाँ छोटा रास्ता चुनना उपयोगी नहीं होगा । छोटा और सुगम रास्ता चुनने के अपने अनुबन्धन के कारण हमलोग इस ''मैं'' की भ्रान्ति में इतने फँस जाते हैं कि इससे बाहर निकलने की आशा ही समाप्त हो जाती है ।

हमलोगों में से कितने लोग हैं जो गुरूजी के शब्दों के मर्मार्थ को समझते हैं। गुरूजी के सन्देश हमें केवल इस बात के लिए प्रेरित करते हैं कि हमलोग ''मैं'' एवं इसकी गतिविधियों को अच्छी तरह समझ सकें । जब कहा जाता है कि किसी का अनुसरण मत करो, तब हम इसे स्वीकार कर लेते हैं, किन्तु हम इसकी गहराई में नहीं उतर पाते कि ऐसा क्यों कहा गया है । हमलोग केवल ''अनुसरण नहीं करना'' की सलाह का अनुसरण करने लगते हैं । इस तरह ''अनुसरण करना'' या ''अनुसरण नहीं करना''–दोनों ही समझदारी का मार्ग न होकर, सुगम मार्ग का चुनाव मात्र है ।

इसी तरह, जब कोई समस्या उत्पन्न होती है तब हम उससे यथाशीघ्र छुटकारा पा लेना चाहते हैं । समस्या क्या है ? – इन बातों को समझने में हमारी कोई रुचि नहीं होती । हमलोग केवल समाधान खोजते हैं क्योंकि हमलोग समस्या और समाधान को अलग–अलग मानते हैं । वस्तुतः समाधान समस्या में ही निहित होता है । फिर भी, हमलोग समस्या को पूर्णरूपेण समझने का प्रयास करने के बदले सुगम लगने वाले समाधान को ही चुन लेते हैं क्योंकि समस्या को समझना कठिन प्रतीत होता है ।

इस अनुबन्धन के कारण हम यह नहीं समझ पाते कि छोटा और सुगम मार्ग खोजने की प्रवृत्ति ही हमारी समझदारी के उदय में विलम्ब का कारण होती है। जहाँ मार्ग है, वहाँ छोटा मार्ग सम्भव हो सकता है किन्तु समझदारी तक पहुँचने का वस्तुतः कोई मार्ग नहीं होता, अतः उसके लिए छोटे मार्ग का प्रश्न ही नहीं उठता । जीवन में समझदारी की ऊर्जा का विस्फोट, शेर की गर्जना की तरह होता है ।

1. नोट : एक बीटल्स गीत का हिन्दी अनुवाद मनन हेतु प्रस्तुत हैं :–

   हम बातें करते थे – 'हमारे बीच कोई दीवार नहीं, हम सब एक हैं,

   पर लोग ''मैं'' की भ्रान्ति की दीवार के पीछे खुद को छिपा लेते हैं

   फिर देर हो जाती है, मृत्यु तक भी जीवनरूपी सत्य की झलक नहीं पाते,

   हम बातें करते थे – यदि प्रेम उपलब्ध हो जाता तो हम सभी उसे आपस में साझा करते

   उसे प्रेमपूर्वक धारण करते और बचाये रखने की कोशिश करते और

   उस प्रेम द्वारा विध्वंस होती दुनिया को बचा पाते, काश ! वे इसे समझ पाते !

   'तुम्हें' कोई समझा नहीं सकता, तुम्हें स्वयं ही स्वयं के अन्दर उसे जानना होगा,

   'तुम्हें' यह देखना होगा कि 'तुम' सचमुच बहुत 'तुच्छ' हो, जबकि विराट चैतन्य प्रवाहित है – तुममें और सब में ।

   हम बातें करते थे – आपसी प्रेम की उष्णता ठंडी हो गयी है । और लोग जब सांसारिकता को उपलब्ध होते हैं, अपनी आत्मा खो देते हैं ।

   ऐसा जब समझोगे, तब पाओगे कि मन की शान्ति वही है

   और तभी तुम देख पाओगे कि हम सभी एक हैं,

   तथा विराट चैतन्य प्रवाहित है – तुममें और सब में ।

2. महत्वाकांक्षा और कुछ बनने के प्रति सजगता ही लोभ, भय तथा विश्वास–पद्धतियों पर निर्भरता की समाप्ति है ।

3. उत्तेजनारहित प्रत्यक्षबोध की प्रशान्ति ही प्रज्ञापूर्ण जीवन का मंगल नृत्य है । यह प्रशान्त झील की अदृश्य लहरों पर चन्द्र किरणों के नर्तन का दिव्य अहोभाव है।

।। जय नृत्य ।।

RETREAT PROGRAM SCHEDULE

DAY 1

22 October 2026 • Thursday

Time		Program
From	To	
8:00 AM	2:00 PM	Kathgodam to Kausani
2:00 PM	6:00 PM	Lunch and Registration
6:00 PM	6:30 PM	Tea & Biscuit
6:30 PM	7:30 PM	Inaugural Session
7:30 PM	9:00 PM	Dinner

DAY 2

23 October 2026 • Friday

Time		Program
From	To	
6:30 AM	7:30 AM	Tea & Getting Ready
7:30 AM	8:30 AM	Combined Kriya Practice
8:30 AM	10:30 AM	Breakfast
10:30 AM	12:00 Noon	Swadhyay Session – 1
12:00 Noon	12:30 PM	Tea Break
12:30 PM	2:00 PM	Swadhyay Session – 2
2:00 PM	4:30 PM	Lunch & Rest
4:30 PM	6:00 PM	Walk
6:00 PM	6:30 PM	Tea & Biscuit
6:30 PM	8:00 PM	Bhajan & Chanting
8:00 PM	9:30 PM	Dinner

DAY 3

24 October 2026 • Saturday

Time		Program
From	To	
6:30 AM	7:30 AM	Tea & Getting Ready
7:30 AM	6:00 PM	Cave Darshan
6:00 PM	8:00 PM	Tea, Snacks & Rest
8:00 PM	9:30 PM	Dinner

DAY 4

25 October 2026 • Sunday

Time		Program
From	To	
6:30 AM	7:30 AM	Tea & Getting Ready
7:30 AM	8:30 AM	Combined Kriya Practice
8:30 AM	10:30 AM	Breakfast
10:30 AM	12:00 Noon	Swadhyay Session – 1
12:00 Noon	12:30 PM	Tea Break

12:30 PM	2:00 PM	Swadhyay Session – 2
2:00 PM	4:30 PM	Lunch & Rest
4:30 PM	6:00 PM	Swadhyay Session – 3
6:00 PM	6:30 PM	Tea & Biscuit
6:30 PM	8:00 PM	Hanuman Puja
8:00 PM	9:00 PM	Dinner

DAY 5

26 October 2026 • Monday

Time		Program
From	To	
6:30 AM	7:30 AM	Tea & Getting Ready
7:30 AM	8:30 AM	Combined Kriya Practice
8:30 AM	10:30 AM	Breakfast
10:30 AM	12:00 Noon	Swadhyay Session – 1
12:00 Noon	12:30 PM	Tea Break
12:30 PM	2:00 PM	Swadhyay Session – 2
2:00 PM	4:30 PM	Lunch & Rest
4:30 PM	6:00 PM	Pranam to Guruji, Group Photograph
6:00 PM	6:30 PM	Tea & Biscuit
6:30 PM	8:00 PM	Short Kriya Session
8:00 PM	9:00 PM	Dinner

DAY 6

27 October 2026 • Tuesday

Time		Program
From	To	
6:30 AM	7:30 AM	Tea & Getting Ready for Departure
7:30 AM	9:00 AM	Breakfast
9:00 AM		Departure with food packets by bus for Kathgodam

Notes

Notes

Notes

"The messages are verbal expressions of non-verbal phenomena which happen in the living organism (body) whose direct sensory perceptions are not made dull through the movements of sensuality (mind) occurring as a result of classifications of the perceptions into pleasant and profitable as against unpleasant and unworthy."

Contemplation on these messages without appreciation or condemnation i.e. through denial of mental mischiefs, may make one's impersonal self (not personality-self) available to a joyful existence beyond all measure, calculation and speculation of a petty mind engaged in accumulations of pleasuresome experiences."

"इन्द्रिय प्रत्यक्षबोध को प्रीतिकर एवं अप्रीतिकर तथा लाभदायक एवं अलाभदायक में वर्गीकृत करने के कारण उत्पन्न वासना (मन) से जो शरीर मुक्त है अर्थात् जिस शरीर का इन्द्रिय प्रत्यक्षबोध वासना से प्रदूषित नहीं है, उस शरीर में घटित अनिर्वचनीय प्रक्रिया की शाब्दिक अभिव्यक्तियाँ हैं – ये संदेश ।

इन संदेशों के ऊपर प्रशंसा–भावरहित या निन्दा–भावरहित अर्थात् मानसिक प्रदूषणों से मुक्त रहकर किया गया मनन व्यक्ति को उसके यथार्थ आत्मतत्व (न कि व्यक्तिपरक मन) के आनन्दमय अस्तित्व को उपलब्ध करा सकता है, जो सुखदायी अनुभवों के संग्रह में व्यस्त क्षुद्र मन की किसी भी प्रकार की माप, चालाकी एवं अनुमान से परे है ।"